Review Of Research ISSN : 2249-894X Impact Factor : 3.1402(UIF)
Volume-4 | Issue-7 | April-2015 Available online at www.lbp.world

ध्यान का मानव शरीर पर वैज्ञानिक प्रभाव का अध्ययन

कु. कीर्ति जौहरी,
शोधार्थी , देवी अहिल्या विश्वविद्यालय , इन्दौर, म. प्र.

Co-Author Details :

डॉ. एस.एस. शर्मा
प्राध्यापक, योग, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय , इन्दौर, म. प्र.

सारांश :–
प्रस्तुत शोध पत्र में पातंजल योग के सातवें अंग ध्यान के अर्थ, प्रकार, महत्व एवं उसके द्वारा मानव शरीर पर होने वाले वैज्ञानिक प्रभाव का अध्ययन किया गया है।

ध्यान :
महर्षि पातंजलि ने ध्यान को सप्तम स्थान दिया है। विभूति पाद के आरंभ में योग के सूक्ष्म एवं अन्तरंग तीन योगांग धारणा, ध्यान एवं समाधि ये अंतरंग अभ्यास माने गये हैं।
धारणा –मन एकाग्र करने के लिये निर्धारित स्थान पर मन लगाना।
समाधि – ध्यान में खो जाना, लीन हो जाना।
इन तीनों अवस्थाओं को एक ही शब्द में कहना हो तो संयम शब्द कहा जाता है। जो इन तीनों की एकता की संस्था है। संयम अर्थात् – धारणा ध्यान समाधि।

ध्यान का स्थान :
ध्यान साधना के आरंभ में स्थान का सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है। एक बार ध्यान लग जाने पर उसे किसी भी परिस्थिति एवं वातारण में किया जा सकता है। चलते-फिरते, खाना खाते, यात्रा में, भीड़-भाड़ वाले स्थानों पर भी यह संभव हो जाता है। किंतु आरंभ में ऐसा संभव नहीं है। ध्यान के लिए स्थान ऐसा हो जहाँ थोड़े समय बिना किसी विघ्न, बाधा के बैठा जा सके तथा जहाँ बैठने से आनंद की अनुभूति हो। जिस स्थान का वातावरण दूषित हो, अधिक लोगों का आवागमन बना रहता हो, जिस स्थान पर बैठने पर अज्ञात भय की अनुभूति हो, जहाँ कोई बुरा कर्म किया गया हो, ऐसा स्थान ध्यान, साधना में बाधक होता है इसलिए इनका ध्यान रख कर कोई एकांत एवं शांत वातावरण वाले स्थान का चयन करना चाहिए। समुद्र तट, प्रवाहित जल, कोई मंदिर आदि के स्थान उपयुक्त रहते हैं। अपने घर में यदि ध्यान किया जाता है तो वह कमरा अलग ही हो, जिसमें अन्य किसी का प्रवेश न हो। उस कमरे को धूप, दीप जला कर सुगंधमय बना लेना चाहिए।

स्थान चयन के बाद आसन चयन महत्वपूर्ण है। ध्यान, साधना में लंबे समय तक एक ही आसन पर शरीर को स्थिर करके बैठना होता है इसलिए आसन ऐसा होना चाहिए जिस पर सुखपूर्वक लंबे समय तक बैठा जा सके। जिससे शरीर को कष्ट न हो। इस आसन पर पद्मासन, सिद्धासन अथवा सुखासन में बैठना चाहिए। रीढ़ की हड्डी सीधी हो तथा हाथों को घुटनों पर रख कर ज्ञान मुद्रा बना कर बैठना चाहिए। रात्रि १२ बजे और प्रातः ४ बजे के बीच का समय ध्यान के लिए सर्वोत्तम है। इस समय पूर्ण शांति तथा शीतलता रहती है। अंधकार में समस्त दृश्य प्रपथ समष्टि के रूप में दिखाई पड़ने लगता है। सूर्य का प्रकाश या अन्य अप्राकृतिक प्रखर प्रकाश (जैसे-गैस का प्रकाश) ध्यान करने के लिए उपयुक्त नहीं है; क्योंकि उनसे मन में विक्षेप उत्पन्न हो जाता है। ध्यान के लिए अँधेरे स्थान उपयुक्त हैं। चाँदनी रात भी इस हेतु उपयुक्त है।

ध्यान करते समय शरीर में शक्तिशाली विद्युत तरंगें उत्पन्न होती है। इस समय हाथ-पैरों को फैला कर रखने से तरंगें ऊँगलियों के अग्रभाग से निकल कर हवा में विलीन हो जाती है। अतः ध्यान करते समय दोनों हाथों की ऊँगलियाँ परस्पर एक-दूसरे से मिली रहनी चाहिए या घुटनों को स्पर्श करती रहनी चाहिए। पद्मासन, सिद्धासन, सुखासन या स्वास्तिकासन में बैठने से इन तरंगों का शरीर में ही परिसंचरण होता रहता है। पृथ्वी में विद्युत-ऊर्जा को शरीर से खींच लेने की क्षमता होती है, अतः ध्यान करते समय व्याघ्र चर्म या मृग छाल पर बैठना चाहिए, ताकि शरीर की ऊर्जा नष्ट न हो तथा वह अधिक मात्रा में उत्पन्न हो सके।

मेरूदंड झुके होने की स्थिति में किसी प्रकार की एकाग्रता संभव नहीं है, इसका कारण यह है कि इस स्थिति में प्राण तरंगों का प्रवाह अवरूद्ध हो जाता है। अतः ध्यान करते समय मेरूदंड सीधा रहना चाहिए।

ध्यान का महत्व :

ध्यान करने से मन मस्तिष्क तथा स्नायु प्रणाली में परिवर्तन आता है। नई स्नायु-धाराएँ, नवीन प्रदोलन (Vibrations), नई कोशिकाएँ तथा नये मार्ग निर्मित होने लगते हैं। मन और स्नायु प्रणाली का नये सिरे से प्रत्योरापण हो जाता है। नया मन, नया हृदय, नई अनुभूतियाँ, नई भावनाएँ, नई चिंतन-प्रणाली, नई कार्य-प्रणाली तथा दूसरों के प्रति नई दृष्टि। ध्यान सर्वाधिक प्रभावोत्पादक मानसिक तथा तांत्रिक प्रभावी टॉनिक है। ध्यान शरीर की प्रत्येक कोशिका में व्याप्त उन विभिन्न रोगों से मुक्ति दिलाती है, जो मानव-शरीर को विरासत में मिले हैं। जो साधक नियमित रूप से ध्यान करते हैं, उन्हें दवाओं पर धन खर्च नहीं करना पड़ता। ध्यान करते समय जो शक्तिशाली शामक तरंगें उत्पन्न होती हैं, वे मन, स्नायुओं, कोशिकाओं और विभिन्न अंगों पर बहुत अनुकूल प्रभाव डालती है।

ध्यान की परिभाषा एवं अर्थ :

ध्यान की परिभाषा :

'ध्यान' शब्द ध्यै धातु में ल्युट् प्रत्यय लगाने से उत्पन्न हुआ है। जिसका अर्थ है- मनन, विचार या चिंतन। धारण द्वारा स्थापित किये हुए लक्ष्य में प्रत्याय द्वारा अर्न्तमुखीं की हुई चित्त की वृत्तियों को तद्रूप कर देना ध्यान है।

जिस प्रकार किसी बर्तन में जल डालने पर जल उस बर्तन का आकार ले लेता है, उसी प्रकार जिस वस्तु को लक्ष्य बना कर चित्त को एकाग्र किया जाता है चित्त उसी का रूप धारण कर लेता है। जब एकाग्रता का प्रवाह निरंतर चलता रहे तो वह ध्यान की अवस्था होती है।

''ध्येय वस्तु के विषय में विचार की बहती हुई सतत् (निरंतर) धारा ही ध्यान है।'' इष्ट वस्तु का सतत् चिंतन ही ध्यान है। ध्यान में किसी वस्तु का चिंतन स्थिर रूप से होता है। धारणा में वृत्तियाँ बार-बार सामने आती है, जिससे एकाग्रता भंग हो जाती है, परंतु ध्यान में एकाग्रता अधिक देर तक रहती है। फलस्वरूप जिस वस्तु में चित्त एकाग्र किया गया हो, उस वस्तु के स्वरूप की स्वच्छ और प्रकाशमान मूर्ति का अंशतः ग्रहण होता है और जब बहुत देर तक ध्यान लगा रहेगा तो इसी मूर्ति का अभ्यास पूर्णतः प्रस्फुटित होने लगता है।

इसी प्रकार के ध्यान द्वारा योगी ध्येय वस्तु के स्वरूप को ठीक-ठीक पहचानने में समर्थ होता है।

१. 'गोरक्ष सहिंता में ध्यान' :- (गो.सं. २/६१)
स्मृत्येव सर्वमिन्तायां धातुरेकः प्रपद्यते।
यश्चित्ते निर्मला चिंता तद्धिध्यानं पचक्षते।।

अर्थात् - साधारण चिंता का वाचक 'स्मृ चिंतायान' धातु है। चित्त को निर्मल करके आत्मा का जो चिंतन किया जाता है, उसे ध्यान कहते हैं।

२. मंडलब्राह्मणेपनिषद् मे ध्यान की परिभाषा :
सर्वशरीरेषु चैतन्यैकतानता ध्यानम्।
(म.ब्र.उ. १/६)

अर्थात् - सब शरीरों में एकमात्र चैतन्य ही है, ऐसी स्थिरता ध्यान है। इससे स्पष्ट है कि ध्यान धारणा की ही उच्चतर अवस्था है। धारणा में बुद्धि की, चित्त की एक तानता होने पर ध्यान की स्थिति आती है। धारणा में भी ऐसा तो होता ही है, परंतु ध्यान में धारणा की अपेक्षा अधिक समय तक ध्येय के चित्त को एकाग्र रूप से लगाये रखने का अभ्यास दृढ़ होता है। धारणा में कुछ ही देर तक ध्येय वस्तु में चित्त की एकाग्रता रहती है। जबकि ध्यान में २४ घण्टे तक ध्येय में चित्तवृत्ति को तदाकार रखना होता है।
योग-सिद्धन्तचन्द्रिका का कथन है कि बारह धारणाओं का एक ध्यान होता है।

३. पातंजल योग दर्शन के अनुसार -
तत्र प्रत्यैकतानता ध्यानम्।
(पा.यो.द. ३/१)

जिस स्थान में चित्त की वृत्ति को बांधा जाये उसी में वृत्ति का एक-सा बना रहना ध्यान है।

तत्र - अर्थात् उस प्रदेश या ध्येय विषय में जिसमें चित्त को ठहराया जाए।
प्रत्यैक - अर्थात् वह वृत्ति है जो धारणा में ध्येय के आकार वाली होकर उसके ही स्वरूप की प्रतीत होती है।
एक तानता - अर्थात् एक-सा बना रहना जो वृत्ति धारणा में ध्येय के आकार की हो गई थी, उसका एक समान प्रवाह से लगातार उदय होता रहना और किसी अन्य वृत्ति का बीच में न आना एक तानता है।
धारणा में चित्त जिस वृत्तिमात्र से ध्येय में लगता है, तब वह वृत्ति इस प्रकार समान प्रवाह से लगातार उदय होती रहे कि दूसरी कोई और वृत्ति बीच में न आये, तब उसको ध्यान कहते हैं। जब वह त्रिपुटी से भान होने वाली विषयाकार वृत्ति व्यवधान रहित हो जाये अर्थात् अन्य विजातीय वृत्तियाँ बीच-बीच न आये, किंतु सदृश वृत्तियों का प्रवाह बना रहे तब तक वह ध्यान कहलाता है।

४.ध्यान बिन्दुपनिषद् के अनुसार : ध्यानबिन्दुपनिषद् में कहा गया है कि -
''यदि पर्वत के सामने अनेक योजन विस्तार वाले पाप भी हो तो भी वे ध्यान योग से नष्ट हो जाते हैं।''
५. विवेक चूड़ामणि के अनुसार : ''जैसे क्षार में डाला हुआ सोना अपना खोट छोड़कर शुद्ध व उज्जवल गुण प्राप्त करता है, ठीक उसी प्रकार ध्यान रूपी क्षार से मन का राजस, तामस, रूपी मल घुलकर सत्व गुण का प्रकाश होता है।''

वैज्ञानिक दृष्टि से मानव शरीर पर ध्यान का प्रभावः

मानव मस्तिष्क की संरचना जटिल है। यह सिर की खोपड़ी में अवस्थित होता है। मस्तिष्क तथा उससे संबंधित सुषुम्ना तीन सुरक्षात्मक से घिरे होते हैं। सबसे बाहरी परत को ''डुरा मैटर'' (Dura Matter) तथा सबसे भीतरी परत को (Pia Matter) कहा जाता है, बीच वाली परत को 'सरैकनोआयर

मैटर'' (Archnoid Matter) कहा जाता है। मस्तिष्क को न्यूरोविज्ञान की भाषा में इनसिफेलोन भी कहा जाता है वैज्ञानिकों ने मस्तिष्क को प्रमुख तीन भागों में बाँटा है।

अग्रमस्तिष्क (Forebrain) :

इसके दो प्रमुख भाग है- टेलेनासिफेलोन तथा डायनसिफेलोन। इन दोनों तथा उनकी प्रमुख संरचनाओं का वर्णन निम्नांकित हैं :-

(क) टेलेनसिफेलोन (Telencephalon) - अग्रमस्तिष्क का यह एक प्रमुख भाग है, वृहत् मस्तिष्क भी कहा जाता है, सम्मिलित होते हैं। प्रमस्तिष्कीय गोलार्द्ध प्रमस्तिष्कीय कार्टेक्स से ढँका होता है। इसे न्योकार्टेक्स भी कहा जाता है। इसके आँतरिक इसमें लिम्बिक तन्त्र तथा बेसल गैगलिया भी सम्मिलित होते हैं।

१. **प्रमस्तिष्कीय कार्टेक्स या न्योकार्टेक्स (Cecebral Cartex or Neo Cortex)** - कार्टेक्स (Cortex) का अर्थ होता है 'छाल' और जिस तरह से पेड़ को छाल ढँके रहता है, ठीक उसी तरह से दोनों प्रमस्तिष्कीय गोलार्द्धों को प्रमस्तिष्कीय कार्टेक्स ढँके हुए होता है। केन्द्रीय तन्त्रिका तंत्र के करीब सभी न्यूरोन्स का ७० प्रतिशत न्यूरोन्स प्रमस्तिष्कीय कार्टेक्स में होता है। मनुष्यों में प्रमस्तिष्कीय कार्टेक्स समतल न होकर कुण्डलित है। इस तरह के कुण्डलीकरण के परिणामस्वरूप तीन तरह की संरचनाएँ बनती है- सुलसी जिसका एकवचन सुलकस है, फिस्सर तथा ग्राइरी।

कुण्डलीकरण के परिणामस्वरूप उत्पन्न छोटे-छोटे खाँचा को सुलसी, बड़े खाँचों को फिस्सर तथा दो सुलसी या फिस्सर के बीच उत्पन्न उभार को गाइरी कहा जाता है। प्रत्येक गोलार्द्ध में दो गहरा दरार होती है जिन्हें सेलैण्डो की दरार या केन्द्रीय सुलकस तथा सिलिभिबस का दरार या लेटरल दरार कहा जाता है। इसके अलावा भी अनेकों छोटी-छोटी दरारें या खाँचा प्रत्येक गोलार्द्ध में पाया जाता है। सच्चाई यह है कि प्रमस्तिष्कीय कार्टेक्स की सतह का करीब दो-तिहाई इन्हीं खाँचों में छिपा होता है। फलस्वरूप, गाहरी तथा सुलसी की उपस्थिति में कारण प्रमस्तिष्कीय कार्टेक्स का क्षेत्र तीन गुणा बढ़ जाता है। कार्टेक्स का कुल सतही क्षेत्र करीब २.५^{२} फीट है और उनकी मोटाई करीब ३ मिलीमीटर होती है।

मनुष्यों में प्रमस्तिष्क कार्टेक्स के अधिकतर भाग के छह परतें होते हैं। कार्टेक्स के छह कोशकीय परतों के नाम इस प्रकार हैं -

छह सतही कार्टेक्स जिनका पता मानव मस्तिष्क के विकास के दौरान् सबसे हाल में चला है, को न्यूकार्टेक्स भी कहा जाता है। इसे आसोकार्टेक्स भी कहा जाता है क्योंकि इसी के सभी भाग छह परतों की होती है। कार्टेक्स के कुछ विशेष भाग में छह से कम परतें होती है जिसे एलोकार्टेक्स कहा जाता है क्योंकि इसी के सभी भाग छह परतों की होती है कार्टेक्स के कुछ क्षेत्र जैसे अग्रपालि का प्रक्केन्द्रीय भाग में दूसरा परत तथा चौथा परत जिन्हें ग्रेनूलर परत कहा जाता है, कम विकसित होते हैं। इसे एग्रानुलर कहा जाता है। मानव मस्तिष्क दो गोलार्द्ध अर्थात् बायाँ गोलार्द्ध तथा दायाँ गोलार्द्ध में बँटा होता है। प्रत्येक गोलार्द्ध केन्द्रीय सुलकस तथा लेटरल दरार की मदद से निम्नांति चार पालियों में बँटा होता है- अग्रपालि, मध्यपालि, शंखपालि तथा पश्चकपालपालि।

१.अग्रपालि - यह केन्द्रीय सुलकस के आगे तथा लेटरल दरार के ऊपरी का भाग होता है। इसके द्वारा गति या पेशीय क्रियाओं तथा उच्चतर चिंतन क्रियाओं ज्ञान होता है। यह सबसे बड़ा पालि होता है ओर इसमें पेशीय कार्टेक्स, ब्रोका क्षेत्र तााि अग्र साहचर्य क्षेत्र आदि सम्मिलित होते हैं।

२.मध्यपालि - यह हिस्सा केन्द्रीय सुलकस के पीछे तथा सिलभियस के दरार के ऊपर होता है। इसके द्वारा मूलतः शारीरिक संवेदनाओं एवं दिशा का ज्ञान होता है।

३.शंखपालि - यह हिस्सा सिलभियस के के दरार के नीचे जिसे हीम कनपट्टी कहते हैं, में होता है। इसके द्वारा श्रवण संवेदनाओं का ज्ञान होता है। इसमें वर्निक क्षेत्र तथा शंख साहचर्य क्षेत्र सम्मिलित होते हैं।

४.पश्चकपालपालि - यह गोलार्द्ध का सबसे पिछला हिस्सा होता है। इसके द्वारा दृष्टि संवेदन का ज्ञान हमें होता है।

प्रमस्तिष्कीय संबंध – (Cortical Connections) :

न्योकार्टेक्स के विभिन्न क्षेत्र निम्नांकित तीन तरह के एक्सान प्रोजेक्सन से अन्तरसंबंध होते हैं :–

(a) एक ही गोलार्द्ध के भीतर एक गाहरस से दूसरे गाइरस के बीच लघु संबंध। ऐसे संबंध प्रदान करने वाले तंतु प्रायः यू–आकारीय होते हैं।

(b) एक ही गोलार्द्ध के भीतर एक पालि का दूसरे पालि के संबंध। ऐसे संबंध प्रदान करने वाले तंतु प्रायः लंबे होते हैं क्योंकि इनके द्वारा दो ऐसे क्षेत्रों के बीच संबंध स्थापित होता है जो एक–दूसरे के दूरी पर होते हैं।

(c) अंतरगोलार्द्धीय संबंध या तंतुबंध जिसमें बहुत लंबे एक्सान प्रोजेक्शन के माध्यम से एक गोलार्द्ध का संबंध दूसरे गोलार्द्ध से या बायाँ गोलार्द्ध से या बायाँ गोलार्द्ध के एक क्षेत्र का संबंध दायाँ गोलार्द्ध के उसी क्षेत्र से जोड़ा जाता है। दोनों गोलार्द्धों के ऐसे समान क्षेत्रों को होमोटोपिक क्षेत्र कहा जाता है।

प्रमस्तिष्कीय तन्तुबंध जिसके माध्यम से बायाँ गोलार्द्ध' तथा दायाँ गोलार्द्ध में संबंध स्थापित होता है, के प्रमुख उदाहरण कारपस कैलोजम है। कारपास कैलोजम की लंबाई लगभग ८ सेंटीमीटर की होती है। इसके आगे का भाग जो वक्राकार होता है, को गेनू कहा जाता है तथा इसके पिछले भाग को स्पेलियनम कहा जाता है जो मध्यमस्तिष्क तथा पिनियल ग्रंथि के ऊपर में अवस्थित होता है। कारपस कैलोजम अपने ऊपरी सतह पर कैलोजल सुलकस द्वारा साइनगलगेट गाइरस के भिन्न होता है। पश्च भाग में गाइरस स्पेलियनम के चारों तरफ वक्र के समान होकर फिर शंखपालि में प्रवेश कर जाता है जिसे पाराहिप्पोकैम्पल गाइरस कहा जाता है। कारपस कैलोजम के अतिरिक्त कुछ तंतुबंधीय तन्तु भी हैं जिनके माध्यम से इन दोनों गोलार्द्धों के बीच संबंध स्थापित होते हैं।

कार्टेक्स का कार्यात्मक प्रभाव (Functional Division of Cortex) :

विशेषज्ञों ने प्रमस्तिष्क ने प्रमस्तिष्क या प्रमस्तिष्क वल्कुट को शरीर के भिन्न–भिन्न कार्यों के स्थानीयकरण के विचार से निम्नांकित चार भागों में बांटा हैं :–

(a) संवेदी क्षेत्र या वल्कुट (Sensory area or Cortex) – वृहत्, मस्तिष्क में एक विशेष क्षेत्र होता है जहाँ पर हमारे शरीर के भिन्न–भिन्न अंगों से आने वाली संवेदी तंत्रिका आवेगों को ग्रहण किया जाता है। इस क्षेत्र को संवेदी क्षेत्र या वल्कुट कहा जाता है। इस क्षेत्र में खास–खास स्थथान होते हैं जो शरीर के भिन्न–भिन्न भागों से आने वाली संवेदी तंत्रिका आवेग को ग्रहण करते हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि संवेदी क्षेत्र में शरीर के ग्राहक क्षेत्र का स्थानीकरण ठीक उसी ढंग से होता है, जैसे किसी नक्शे में शहर, पहाड़ आदि का। संवेदी क्षेत्र में ग्राहक क्षेत्रों के इस प्रकार के स्थानीयकरण को स्थालाकृतिक संगठन की संज्ञा दी गयी है। स्थलाकृतिक संगठन के सिद्धांत के अनुसार पैर से आने वाली संवेदनाएँ संवेदी क्षेत्र के एक खास भाग में पहुँचती हैं, आँख से आने वाली संवेदनाएँ दूसरी भाग में पहुँचती हैं, उसी तरह से शरीर के प्रत्येक भाग से आने वाली संवेदनाओं का अपना एक विशेष क्षेत्र होता है। मनोवैज्ञानिकों ने संवेदी क्षेत्र को निम्नांकित तीन भागों में बाँट कर अध्ययन किया है –

(i) दृष्टि क्षेत्र (Visual Area) – प्रत्येक गोलार्द्ध में दृष्टि संवेदी क्षेत्र पश्चकपालपालि कहा जाता है, में पहुँचता है। दायी आँख से कुछ तंत्रिका तंतु दायें गोलार्द्ध तथा बायीं आँख से कुछ तंत्रिका तंतु बायें गोलार्द्ध में पहुँचते हैं। बायीं आँख तथा दायीं आँख से निकलने वाली कुछ ऐसे भी तंतु है जो एक–दूसरे को खास जगह पर क्रॉस करते हुए विपरीत गोलार्द्ध में पहुँचते हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि बांयीं आँख से निकलने वाले कुछ तंत्रिका तंतु दायें गोलार्द्ध में तथा दायीं आँख से निकलने वाले कुछ तंत्रिका तंतु बायें गोलार्द्ध में एक खास जगह पर क्रॉसिंग करते हुए पहुँचते हैं। जिस जगह पर क्रॉसिंग होती है उसे अक्षि व्यत्यासिका कहा जाता है। कुछ ऐसे भी तंत्रिका तंतु हैं जो दोनों आँखों के बायें भाग से तंत्रिका तंतु तंत्रिका आवेग के दायें पृष्ठपालि जो दायें गोलार्द्ध में हैं, में पहुँचाता है। शायद यही कारण है कि यदि बायाँ या दायाँ पृष्ठपालिक किसी कारण से क्षतिग्रस्त हो जाता है तो दोनों आँखों की रोशनी थोड़ी कम हो जाती है। कुछ ऐसे अध्ययन डोवेली तथा उसके सहयोगियों द्वारा किए गए है जिनसे यह तथ्य स्पष्ट हो जाता है। मस्तिष्क के ऑपरेशन के दौरान् यदि व्यक्ति के दृष्टि क्षेत्र को बिजली के हल्के झटके द्वारा उत्तेजित किया

जाता है तो वह व्यक्ति जो स्थानीय एनेस्थीसिया के अंतर्गत होता है, कुछ देखने जैसी संवेदना को बतलाता है।

(ii) श्रवण क्षेत्र (Auditory Area) – संवेदी क्षेत्र का दूसरा महत्वपूर्ण भाग श्रवण क्षेत्र या श्रवण वल्कुट होता है जो दोनों गोलार्द्धों के शंखपालि में अवस्थित होता है। श्रवण क्षेत्र में भी कुछ स्थानिक चित्रण पाया जाता है। दूसरे शब्दों में यह कहा जाता है कि इस क्षेत्र में कुछ ऐसे भाग हैं जो ऊँची आवाज के प्रति संवेदनशील होते हैं। श्रवण क्षेत्र का सबसे महत्वपूर्ण गुण यह है कि प्रत्येक कान से तंत्रिका आवेग दोनों गोलार्द्धों के शंखपालि में पहुँचते हैं। अतः किसी कारण से दायीं शंखपालि या बायाँ शंखपालि क्षतिग्रस्त हो जाता है, जो व्यक्ति पूर्णतः बहरा नहीं होता है क्योंकि इन दोनों शंखपालि में से जो ठीक रहता है, वह दूसरे शंखपालि का भी कार्य कर लेता है। हाँ यदि दोनों शंखपालि किसी कारण से क्षतिग्रस्त हो जाते हैं तो व्यक्ति पूर्णतः बहरा हो जाता है।

(iii) कायिक संवेदी क्षेत्र (Auditory Area) – कायिक संवेदी क्षेत्र जिसे कायिक संवेदी वल्कल (**Cortex**) भी कहा जाता है, एक ऐसा क्षेत्र है जो त्वचा संवेदनाओं जैसे स्पर्श, दर्द, ताप, दबाव आदि को ग्रहण करता है। यह क्षेत्र मध्यपालि में अवस्थित होता है जो केन्द्रीय सुल्कस के ठीक पीछे होता है।

शरीर के बायें भाग से उत्पन्न त्वचा संवेदनाएँ दायें कायिक संवेदी वल्कल में जाती है तथा शरीर के दायें भाग से उत्पन्न त्वचा संवेदनाएँ आयें कायिक संवेदीवल्कल में जाती है। कायिक संवेदी वल्कल की एक विशेषता यह भी है कि इसमें शरीर के नीचे के अंगों से यानी पैर की ऊँगलियों से आने वाली संवेदनाओं को विपरीत कायिक संवेदी वल्कुट के ऊपरी भाग द्वारा ग्रहण किया जाता है।

(b) पेशीय या गति वल्कुट या क्षेत्र (Motor Cortex or Area) – पेशीय या गति वल्कुटकेन्द्रीय सुल्कस के ठीक आगे होता है एवं यह अग्रपालि में अवस्थित होता है। इसके द्वारा शरीर की ऐच्छिक क्रियाओं का संचालन एवं नियंत्रण होता है। शरीर के बायें भाग के अंगों का संचालन दायें गोलार्द्ध की गति वल्कल द्वारा तथा शरीर के दायें भाग के अंगों का संचालन बायें गोलार्द्ध के गति वल्कल द्वारा होता है। इस गति वल्कल की एक विशेषता यह भी है कि इसमें शरीर के निचले भाग के अंगों जैसे पैर तथा उसके ऊँगलियों की गति क्रियाओं का संचालन गति वल्कल के ऊपरी भाग द्वारा तथा शरीर के ऊपर हिस्से के अंगों जैसे जीभ, होठ, गर्दन आदि की गति का संचालन गति वल्कल के निचले भाग द्वारा होता है।

(c) साहचर्य क्षेत्र या वल्कल (Association Area) – प्रमस्तिष्क वल्कल में एक बहुत बड़ा क्षेत्र ऐसा है जिसका संबंध न तो संवेदी प्रक्रियाओं से है और न ही गति प्रक्रियाओं से। इस क्षेत्र को साहचर्य क्षेत्र या वल्कल कहा गया है।

साहचर्य वल्कल को निम्नांकित तीन भागों में बाँटा गया है –

(i) अग्र साहचर्य क्षेत्र (Frontal association Area) – अग्रपालि के उस बड़े भाग को अग्र साहचर्य क्षेत्र कहा जाता है जो गति क्षेत्र के आगे होता है। इसमें उस तरह की चिंतन प्रक्रियाओं का स्थानीयकरण होता है जिनके सहारे व्यक्ति किसी समस्या का समाधान करता है। अब साहचर्य क्षेत्र के क्षतिग्रस्त होने पर यह भी देखा गया है कि ऐसे व्यक्ति में कुछ खास-खास संवेग जैसे डर, दुश्चिंता, विद्वेष आदि परिस्थिति अनुकूल होने के बावजूद भी कम होते हैं।

(ii) पश्च साहचर्य क्षेत्र (Posterior Association Area) – पश्च साहचर्य क्षेत्र मध्यपालि में अवस्थित होता है तथा इसमें मूलतः स्पर्श प्रत्यक्षण, शरीर के भिन्न-भिन्न अंगों द्वारा किए गए क्रियाओं का प्रत्यक्षण, भाषा आदि का ज्ञान होता है। ऐसा देखा गया है जब किसी दुर्घटना या अन्य कुछ आकस्मिक कारकों से पश्च साहचर्य क्षेत्र क्षतिग्रस्त हो जाता है, तो इससे अनेक प्रकार को समस्याएँ जो मूलतः स्पर्श, प्रत्यक्षण, शारीरिक क्रियाओं की गतिविधियों के प्रत्यक्षण एवं भाषा संबंधी ज्ञान से संबंधित होता है, उत्पन्न हो जाते हैं। ऐसे व्यक्ति किसी वस्तु को यदि सिर्फ छूकर उसके बारे में बतलाना चाहे, तो यह उसके लिए कठिन होगा। प्रत्यक्षण से संबंधित अन्य प्रकार की विकृतियाँ भी ऐसे व्यक्तियों में पाई जाती है। कुछ ऐसे व्यक्ति में अपने ही शरीर के आधे भाग से उसे स्पर्श प्रत्यक्षण होता है और बाकी आधे भाग से उसे इस तरह का प्रयक्षण नहीं होता है। इस तरह की विकृति को एपरैक्सिया कहा जाता है। इस तरह के व्यक्तियों में भाषा से संबंधित अनेक दोष उत्पन्न हो जाते हैं। इनमें वाचाघात, ऐकैलकुलिया, पठन-अक्षमता, लेखन अक्षमता आदि प्रमुख है। वाचाघात में व्यक्ति किसी चीज को बोलकर व्यक्त करने में तथा किसी दूसरे द्वारा बोले

गये शब्दों को समझने में असमर्थ रहता है। ऐकैलकुलिया में व्यक्ति साधारण अंकगणितीय परिकलन भी करने में असमर्थ रहता है। पठन-अक्षमता में व्यक्ति किसी छपे हुए या लिखे हुए चीजों को पढ़ नहीं पाता है तथा लेखन अक्षमता में व्यक्ति अपने विचारों को लिख कर अभिव्यक्त करने में असमर्थ रहता है।

(iii) शंख-पृष्ठ साहचर्य क्षेत्र (Temporal-accipital association area) – शंख-पृष्ठ साहचर्य क्षेत्र द्वारा व्यक्ति को दृष्टि प्रत्यक्षण तथा श्रवण प्रत्यक्षण से अधिक स्पष्टता आती है। ऐसा देखा गया है कि दायें गोलार्द्ध का यह क्षेत्र अर्थात् पृष्ठ साहचर्य क्षेत्र यदि किसी कारण से क्षतिग्रस्त हो जाता है तो इससे किसी जटिल वस्तुओं के आकार को पहचानने तथा उसे अन्य सदृश आकरों से विभेदित करने में कठिनाई होती है।

(d) घ्राण कार्टेक्स (Olfactory cartex) – घ्राण कार्टेक्स का प्रमस्तिष्कीय प्रतिनिधित्व ऊपर में वर्णन किए गए तीनों प्रमुख संवेदी रूपात्मकता से दो अर्थों में भिन्न होती है। पहला, दृष्टि श्रवण तथा कायिक संवेदन में तंत्रिका आवेग के रूप में विशिष्ट तरह की ऊर्जा प्राप्त होने पर संबंधित संवेदनों का ज्ञान होता हे परंतु कार्टेक्स में घ्राण संवेदन की उत्पत्ति तब होती है तब वातावरण में विशेष तरह के अणु की उपस्थिति की कोडिंग व्यक्ति द्वारा की जाती है। दूसरा, दृष्टि श्रवण तथा कायिक संवेदन क्षेत्रों से प्राप्त होने वाले सूचनाओं को पहले थैलमस में रिले किया जाता है और तब वह संबंधित मुख्य कार्टिकल क्षेत्र में पहुँचता है। परन्तु घ्राण सूचनाएँ बिना थैलमिक रिले के ही सीधे घ्राण कार्टेक्स में पहुँच जाती है। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि प्रत्यक्ष रूप से घ्राण सूचनाओं का घ्राण कार्टेक्स में पहुँचने के कारण ही घ्राण अनुभूतियों की सांवेगिक तीव्रता का अनुभव व्यक्ति को होता है।

ऊपर वर्णन किए गए तथ्यों के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि प्रमस्तिष्क वल्कल में भिन्न-भिन्न क्षेत्र है जिनमें भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्य अवस्थित है। सच्चाई यह है कि प्रमस्तिष्क वल्कल के तीनों क्षेत्रों अर्थात् संवेदी वल्कल, गति वल्कल एवं साहचर्य वल्कल आपस में मिल-जुलकर अर्थात् संगठित होकर कार्य करते हैं।

२. लिम्बिक तंत्र (Limbic System) – १९वीं शताब्दी में पॉल ब्रोका अग्रमस्तिष्क तथा मस्तिष्क स्तंभ के बीच के किनारे पर की संरचनाओं के लिए लिम्बिक पालि जैसे पद का उपयोग किया था। इन संरचनाओं में साइनगुलेट गाइरस, सबकैलोजल गाइरस, पाराहिपोकैम्पल गाइरस तथा हिप्पोकैम्पस आदि प्रधान है। १९५२ में पाल मैकलीन ने लिम्बिक पालि के जगह पर लिम्बिक तंत्र पद का प्रथम बार उपयोग किया तथा इसमें उपर्युक्त संरचनाओं के अतिरिक्त कुछ अन्य संरचनाएँ जिनमें सेपटम, एमिगडाला, मैमिलियरी बॉडिज आदि प्रमुख है, ो सम्मिलित किया। यद्यति आज भी न्यूरोवैज्ञानिकों के बीच इस बिन्दु पर सहमति नहीं है कि किन-किन संरचनाओं को इसमें किस कसौटी के आधार पर रखा गया, फिर भी उक्त संरचनाओं के बारे में कुछ हद तक सहमति है।

३.बेसल गैंगलिया – अग्र मस्तिष्क में धूसर पदार्थों के उपकार्टिकल संरचनाओं का एक समूह है जिसे वेसल गैगलिया कहा जाता है। वेसल गैगलिया के तीन उपप्रभाग हैं जिनके नाम है- पुटामेन, ग्लाबस पाल्लिडस तथा काऊडेट न्यूक्लिअस। पुटामेन तथा ग्लोबस पाल्लिडस को एक साथ मिला कर कभी-कभी लेनटिफार्म न्यूक्लियस कहा जाता है। काऊडेट न्यूक्लिअस तथा पुटामेन को एक साथ मिला कर नियोसैचिरेटम भी कहा जाता है। इन दोनों की कोशिकाओं की संरचनाएँ लगभग समान होती है। पुटामेन, ग्लोबस पाल्लिडस तथा काऊडेट न्यक्लिअस को एक साथ मिला कर कोरपस सैचिरेटम कहा जाता है। ग्लोबस पाल्लिडट के दो हिस्से होते हैं-बाह्य भाग तथा आन्तरिक भाग।

(ख) डायनसिफेलोन – डायनसिफेलोन अग्रमस्तिष्क का दूसरा महत्त्वूपर्ण भाग है। यह मध्यमस्तिष्क तथा टेलेनसिफेलोन के बीचव अवस्थित होता है और यह तीसरा भेन्ट्रीकल को घेरे रहता है। डायनसिफेलोन को अक्सर अन्तरमस्तिष्क कहा जाता है क्योंकि इसके अपने न्यूक्लिआई होने के अतिरिक्त यह एक रिले केन्द्र के रूप में भी कार्य करता है जिसमें मस्तिष्कीय स्तंभ से आने वाली सूचनाओं को ग्रहण करके अग्रमस्तिष्क के अन्य भागों में उनका प्रसारण होता है।

डायनसिफेलोन के तीन महत्वपूर्ण संरचनाएँ है–इपिथैलमस, थैलमस तथा हाइपोथैलमस। इन तीनों का वर्णन इस प्रकार है–

इपिथैलमस – इपिथैलमस जिसका शाब्दिक अर्थ ऊपरी कमरा होता है, एक महत्त्वापूर्ण भाग है। इपिथैलमस में दो महत्त्वपूर्ण संरचनाएँ होती है जिसमें एक को पिनियल ग्रंथि तथा दूसरे को पश्च तंतु बंध कहा जाता है। पिनियल ग्रंथि मस्तिष्क का मात्र अद्विपार्श्विक संरचना होता है। इससे निकलने वाले हार्मोन को मेलाटोनिन कहा जाता है जिस पर प्राणी में सक्रियता का स्तर निर्भर करती है। कुछ न्यूरोमनोवैज्ञानिकों का कहना है कि मनुष्यों में दायाँ गोलार्द्ध का मेडियल दृश्य अभी भी इपिथैलमस का कार्य अच्छी तरह से ज्ञात नहीं है।

१. **थैलमस** – मध्यमस्तिष्क के ठीक ऊपर और दोनों प्रमस्तिष्क गोलार्द्ध के बीच में एक अण्डाकार संरचना होती है जिसे थैलमास कहा जाता है। चूँकि थैलमस दोनों प्रमस्तिष्क गोलार्द्ध के बीच में होता है, अतः इसे ऊपर से देखा नहीं जा सकता है। इसे देखने के लिए दोनों गोलार्द्ध को एक–दूसरे से अलग करना होगा। थैलमस, डायनसिफेलोन का डॉर्सल हिस्से से बना होता है। यह एक ऐसी संरचना होती है जिसमें दो पालि होते हैं जो भूरा पदार्थ के एक पुल जिसे मास इंटरमीडीया कहा जाता है, से संबंधित होता है। थैलमस को दो क्षेत्रों में बाँटा जा सकता है–भेन्ट्रल थैलमस तथा डार्सल थैलमस।

२. **हाइपोथैलमस** – थैलमस के नीचे एक छोटी परंतु अत्यंत ही महत्वपूर्ण संरचना है जिसे हाइपोथैलेमस की संज्ञा दी जाती है। कोल्ब तथा हिश्शा, १९९० के अनुसार हाइपोथैलमस करीब २२ लघु न्यूक्लिआई, तंतु तंत्र जो इससे होकर गुजरता है तथा पीयूष ग्रंथि से बना होता है। यह मस्तिष्क के कुल वनज का करीब ०.३ प्रतिशत होता है। कुछ न्यूरोवैज्ञानिक हाइपोथैलमस को लिम्बिक तंत्र का एक हिस्सा मानते हैं। नाऊटा तथा फिरटैग, १९८६ के अनुसार लिम्बिक तंत्र को उन संरचनाओं के रूप में परिभाषित किया जाना चाहिए जो हाइपोथैलमस के साथ घनिष्ठ संधिस्थलीय संबंध रखते हैं।

हाइपोथैलमस को मनोवैज्ञानिकों ने काफी महत्त्वपूर्ण इसलिए बतलाया है क्योंकि इसका संबंध प्राणी के संवेग तथा अभिप्रेरण से अधिक है। हाइपोथैलमस के प्रमुख कार्य निम्नांकित हैं–

(i) हाइपोथैलमस व्यक्ति के प्रमुख जैविक अभिप्रेरक जैसे भूख, प्यासा, यौन आदि को नियंत्रित करता है।

(ii) शरीर के भीतर में एक सामान्य सन्तुलन बनाये रखने में हाइपोथैलमस प्रमुख भूमिका निभाता है। सामान्य रूप से कार्य करने के लिए यह आवश्यक है कि शरीर का एक खास तापक्रम हो तथा हृदय गति एवं रक्त चाप सामान्य हो। शरीर के भीतर की इस सामान्य सन्तुलन की स्थिति को मनोवैज्ञानिकों ने समस्थिति की संज्ञा दी है। हाइपोथैलमस इस समस्थिति को कायम रखने की कोशिश करता है। अगर किसी कारण से समस्थिति में गड़बड़ी हो जाती है, तो हाइपोथैलमस फिर से शरीर के भीतर समस्थिति को बनाये रखने के लिए क्रियाशील हो जाता है।

(iii) हाइपोथैलमस द्वारा स्वायत्त तंत्रिका तथा अंतःस्रावी क्रियाओं का भी नियंत्रण होता है। पीयूष ग्रंथि जो एक अंतःस्रावी ग्रंथि है, मस्तिष्क में हाइपोथैलमस के आधार से एक डण्डी से जुड़ा होता है। हाइपोथैलमस पीयूष ग्रंथि के कार्यों का नियंत्रण या तो सीधे तंत्रिका आवेग वहाँ भेज कर या विशेष रासायनिक तत्त्व जिसे मुक्त कारक कहा जाता है, द्वारा करता है।

हाइपोथैलमस प्राणी के संवेग में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

(v) हाइपोथैलमस प्राणियों के उत्तरजीविता से संबंधित व्यवहारों को संगठित करता है। ऐसे व्यवहारों को सामान्यतः चार एफ के रूप मं जाना जाता है–लड़ना, भोजन करना, भाग जाना तथा जोड़ा खाना।

मध्यमस्तिष्क (Midbrain or Mesencephalon) :

मध्यमस्तिष्क डायसिफेलोन तथा सेतु के बीच अवस्थत होता है। इसके दो प्रभाग है–टेक्टम तथा टेगमेन्टम।

टेक्टम मध्य मस्तिष्क का वह भाग होता है जो प्रमस्तिष्कीय एक्वीडक्ट के ऊपर होता है। इसमें दो युग्मित संरचनाएँ होती है जिन्हें सुपरियर कोलिकुली तथा इनफेरियर कोलिकुली कहा जाता है। यह मस्तिष्क स्तंभ पर चार उभाड़ के रूप में दिखता है। इनफेरियर कोलिकुली श्रवण तंत्र का हिस्सा होता है जबकि

सुपीरियर कोलिकुली दृष्टि तंत्र का हिस्सा होता है। इसका मतलब यह हुआ कि इनफेरियर कोलिकुली द्वारा श्रवण संवेदन तथा सुपीरियर कोलिकुली द्वारा दृष्टि संवेदन का ज्ञान होता है।

टेगमेनटम मध्यमस्तिष्क का वह भाग होता है कि जो टेक्टम के नीचे होता है। दूसरे शब्दों में यह प्रमस्तिष्कीय एक्पीडक्ट के नीचे होता है। इसमें रेटिकुलर फारमेशन का मस्तिष्क में जाने वाला अन्तिम छोर, आँख की गति को नियंत्रित करने वाला कई केन्द्र, पेरीएक्वीडक्टल धूसर पदार्थ, लाल न्यूक्लिअस, भेन्ट्रल टेगमेंटल क्षेत्र आदि सम्मिलित होते हैं। मध्यम मस्तिष्क का अधिकतर भेन्ट्रल क्षेत्र बड़े तंतु पथ होते हैं जो सूचनाओं को अग्रमस्तिष्क से सुषुम्ना में ले जाता है। उसे कार्टिकोमेरूदंडीय पथ कहा जाता है तथा कुछ तंतु होते हैं जो सूचनाओं को अग्रमस्तिष्क से मस्तिष्कीय स्तंभ में ले जाता है। इसे कार्टिकोबाल्बर पथ कहा जाता है। अग्रमस्तिष्क तथा लघुमस्तिष्क के बीच में आने तथा जाने वाली तंत्रिका तंतु भी मध्यमस्तिष्क होकर ही गुजरती है।

मध्य मस्तिष्क में दो क्रेनियल तंत्रिका न्युक्लिाई जिससे नेत्र गति नियंत्रित होता है, पाया जाता है। ये दो न्यूक्लिअस है- ओकुलोमोटर न्यूक्लिअस तथा ट्रोकलियर न्यक्लिअस।

पश्च मस्तिष्क (Midbrain or Mesencephalon) :

पश्च मस्तिष्क मस्तिष्क के चौथे भेन्ट्रीकल के चारों तरफ होता है। इसके दो प्रभाग है- मेटेनसिफेलोन तथा माइलेनसिफेलोन। इन दोनों प्रभागों का वर्णन इस प्रकार है-

(a) मेटेनसिफेलोन - इसमें दो तरह की संरचनाएँ होती है-सेतु तथा लघुमस्तिष्क इन दोनों का वर्णन इस प्रकार है:-

सेतु मेसेनसिफेलोन तथा मेडुला के बीच में अवस्थित होते हैं। इसमें भिन्न-भिन्न प्रकार के संवेदी न्यूरोन तथा गति न्यूरोन पाये जाते हैं। सिर एवं चेहरे से प्राप्त कुछ संवेदी तंत्रिका आवेग जो स्पर्श, दर्द तथा ताप से संबंधित होता है, सेतु द्वारा ही ग्रहण किये जाते है। कुछ गति क्रियाएँ जैसे आनन अभिव्यक्ति में होने वाली पेशीय क्रियाएँ, नेत्र गोलक की गति तथा जबड़े की गति का संचालन आदि भी सेतु द्वारा ही होता है। इसके अलावा सेतु में ऊपरी दिशा तथा निचली दिशा में जाने वाली अनेकों तंत्रिका तंतु पाए जाते हैं। इन तंतुओं के सहारे सेतु मस्तिष्क के उच्च भागों तथा निचली भागों के बीच संबंध स्थापित कर पाता है। सेतु में रेटिकुलर फारमेशन का बड़ा भाग होता है।

लघुमस्तिष्क मध्यमस्तिष्क का दूसरा महत्त्वपूर्ण प्रभाग है। लघुमस्तिष्क सचमुच में वृहत् मस्तिष्क का एक छोटा प्रारूप होता है। यह मस्तिष्क के पिछले सतह पर सेतु के समानान्तर अवस्थित होना है। यह सेरीबेल्लर कार्टेक्स से ढँका होता है और इसमें गहरी सेरीबेल्लर केन्द्रक होते है जो सूचनाओं को कार्टेक्स मं भेजते हैं और कार्टेक्स से सूचनाओं को प्राप्त भी करते हैं।

लघुमस्तिष्क की गहराई में गहरे केन्द्रकों के चार जोड़े होते हैं। सेरिबेलर कार्टेक्स तथा गहरे केन्द्रक के बीच उजले पदार्थ पाये जाते हैं।

(b) माइलेनिसिफेलोन - माइलेनसिफेलोन में एक बड़ी संरचना होती है जिसे मेडुलाऔवलोगटा या संक्षेप में मेडुला कहा जाता है। मेडुला का स्थान सेतु के नीचे तथा सुषम्ना के ऊपर होता है। मेडुला में दो बड़े केन्द्रक अर्थात् ग्रेसाइल केन्द्रक, कुनिट केन्द्रक तथा कायिक संवेदी पथ होते हैं जो स्पर्श, शारीरिक स्थान ज्ञान, गति संवेदनों को सुषम्ना से थैलमस तक पहुँचाते हैं और फिर उसके बाद कार्टिकल कायिक संवेदी क्षेत्र में भेजते हैं। मेडुला में कई संवेदी केन्द्रक होते हैं जिसमें चेहरा, मुँह, कंठ तथा पेट से मिलने वाले संवेदी निवेश सम्मिलित होते हैं। मेडुला में कुछ पेशीय केन्द्रक भी होते हैं जिनके माध्यम से गर्दन, जीभ तथा गला आदि को अनुप्राणित करता है। मेडुला में कुछ पेशीय केन्द्रक ऐसे होते हैं जो शरीर के ऐसे अंगों को अनुप्राणित करते हैं जो व्यक्ति के जीवन को बनाये रखने के लिए आवश्यक होता है। ऐसे अंगों में हृदय, श्वसन क्रिया में सम्मिलित मांसपेशियों तथा आंतराग आदि प्रधान है।

अग्र मेडुला में कार्टिको दंडीय पेशीय प्रक्षेपण पाये जाते हैं। मैडुला के करीब आधे भाग नीचे में जाकर दोनों तरफ का करीब ९० प्रतिशत कोर्टिकोमेरूदंडीय तन्तु एक-दूसरे को क्रास करते हुए विपरीत पार्श्विक भाग में जाते हैं। इस क्रॉसओवर बिन्दु को पिरामिडल डिकुसेशन कहा जाता है।

मन पर ध्यान का प्रभाव :

मनुष्य की शारीरिक शक्ति की अपेक्षा उसका मन कई गुना शक्तिशाली होता है। जिसका मन दुर्बल है, वह शारीरिक दृष्टि से बलिष्ठ होने पर भी पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं करता। दुनियां में कई महान् एवं महत्वपूर्ण कार्य मानसिक शक्ति को प्रबलता से ही हुए है। मन मजबूत होने पर शरीर भी उसका साथ देता है। शरीर पोषण से मांस और रक्त ही बढ़ता है किंतु इससे वह मानसिक सबसे शक्तिवाली नहीं हो जाता है।

मन का शरीर का सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है। शरीर की समस्त क्रिया प्रणाली मन के द्वारा ही संचालित एवं नियंत्रित होती है। यदि मन को परिवर्तित कर दिया जाये तो उससे शरीर में आश्चर्यजनक परिवर्तन दिखाई देने लगते हैं। यदि मन की बाह्य वृत्तियों का निरोध कर दिया जाये तो वह अंतर्मुखी होकर आत्मिक शक्ति के जागरण का माध्यम भी बन सकता है। इसलिए उपनिषदों में कहा गया है कि ''यह म नही मनुष्य के बंधन एवं मुक्ति का कारण है। जब यह विषयासक्त होता है तो वह बंधन का कारण बनता है तथा निर्विषय होने पर यही मुक्ति का कारण हो जाता है।'' मन समस्त शरीर, इन्द्रियों, भावनाओं, इच्छाओं, वासनाओं आदि को नियंत्रित करने वाला है। यह जिस ओर जाता है तथा जिस वस्तु की चाहना करता है, जिसकी कामना करता है, शरीर की प्राण ऊर्जा उसी ओर प्रवाहित होने लगती है। इस ऊर्जा प्रवाह के कारण शरीर का वह अंग अधिक सक्रिय हो जाता है तथा शरीर की संपूर्ण शक्ति उसी ध्येय की पूर्ति में लग जाती है जिससे उस कार्य को सम्पन्न करने में अधिक सुविधा होती है। मन की इस गति को जानकर मनुष्य चाहे उसे सद्कर्मों में लगाये अथवा बुरे कर्मों में, यह मनुष्य की स्वतंत्रता है किंतु यह स्वतंत्रता भी एक प्रकार से पराधीनता है क्योंकि यह मन पूर्व संस्कारों से ग्रसित है तथा समाज का वातावरण उसे वह कार्य करने देना नहीं चाहता जो वह चाहता है बल्कि जिस वातावरण में वह पलता है, उस समाज का वातावरण ही उसे उसी प्रकार का कार्य करने को बाध्य करता है जिससे मन का स्वतंत्र चिंतन एवं विकास रूक जाता है तथा वह उस वातावरण के अनुकूल ढल जाता है। उसे अच्छे-बुरे, सत्य-असत्य का कोई ज्ञान नहीं रहता। इसी कारण यह अन्य सांसारिक व्यक्तियों की भाँति जीवन भर दुःखी ही बना रहता है।

मनुष्य के मन की ये दबी हुई वासनाएँ, इच्छाएँ आदि अपने प्रकटीकरण का मार्ग खोजती रहती हैं तथा सामाजिक वातावरण उन्हें निरंतर दबाने का प्रयत्न करता है जिससे व्यक्ति में कुण्ठाएँ उत्पन्न होती है तथा इससे उसके भीतर एक अज्ञात मानसिक संघर्ष उत्पन्न हो जाता है जिससे उसके मन एवं शरीर में सन्तुलित ऊर्जा प्रवाह में गड़बड़ी हो जाती है। यही गड़बड़ी विभिन्न प्रकार के मानसिक एवं शारीरिक रोगों के रूप में प्रकट होती है। अज्ञात मानसिक संघर्ष का पहला परिणाम अकारण चिन्ता अशान्ति और भय के रूप में होता है। बाद में ये रोग और भी जटिल रूप धारण कर शारीरिक रोगों के रूप में प्रकट होते हैं। ठण्च्ण्ए माइब्रेन, कब्ज, दमा, हृदय रोग, पेट के रोग आदि इन्हीं का प्रकट रूप है। शारीरिक व्याधियों व रोगों में अधिकांश मन की ही उपज है।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

आसन क्यों और कैसे	ओमप्रकाश तिवारी	कैवल्य धाम लोनावला, २००५
आसन, प्राणायाम, मुद्र बंध	स्वामी सत्यानंद सरस्वती	योग पब्लिकेशन ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार, २००६
आधुनिक सामान्य मनोविज्ञान	अरूणकुमार सिंह, डॉ. आशीष कुमार सिंह	मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, २००४
आधुनिक असामान्य मनोविज्ञान	अरूणकुमार सिंह, डॉ. आशीष कुमार सिंह	मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, २००४
आधुनिक प्रायोगिक मनोविज्ञान	डॉ. प्रीति वर्मा, डॉ. डी.एन. श्रीवास्तव	अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा, २०१३-१४
उच्चतर नैदानिक मनोविज्ञान	अरूणकुमार सिंह	मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, २०१२
घेरण्ड संहिता	स्वामी निरंजनानंद स्वामी	भारती, मुंगेर
घेरण्ड संहिता	स्वामी दिगम्बरजी	कैवल्य धाम लोनावला

ध्यान दर्शन	ओशो	हिन्दी पॉकेट बुक
ध्यान योग	महोपाध्याय ललितप्रभ सागर	पुस्तक महल, दिल्ली, २००५
ध्यान योग	श्री स्वामी शिवानंद सरस्वती	दिव्य जीवन संघ प्रकाशन, १९८७
ध्यान योग चिकित्सा	नंदलाल दशोरा	रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार
ध्यान साधन	नंदलाल दशोरा	रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार, २०११
न्यूरो मनोविज्ञान के मूल तत्व	अरूणकुमार सिंह	मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, २००४
परमात्म प्रकाश और योगसार	श्रीमद् रामचन्द्र जैन शास्त्रमाला	श्रीमद् रामचन्द्र जैन शास्त्रमाला
पतंजली योग प्रदीप	ओमानंद तीर्थ	गीता प्रेस, गोरखपुर, संवत्, २०६३
पातंजली योग दर्शन	आरण्य हरिहरानन्द	मेतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, १९५३-७४
पातंजलि योग दर्शन	पं. वासुदेव त्रिपाठी	देवराज प्रकाशन, इन्दौर, २००६
प्राणायाम	स्वामी कुवल्यानंद	कैवल्य धाम, लोनावला, २०००
भारतीय दर्शन भाग-१	डॉ. राधाकृष्णन	हिन्दी प्रिन्टिग प्रेस, दिल्ली, १९६६
भारतीय दर्शन भाग-२	डॉ. राधाकृष्णन	सम, सीता प्रिंटिंग प्रेस, दिल्ली, १९६९
भारतीय दर्शन भाग-३	डॉ. एस.एन. दास गुप्ता	राजेस्थान प्रिंटिंग वर्क्स, जयपुर, १९७४
मानव शरीर व शरीर क्रिया विज्ञान	मोहनमूर्ति शाण्डिल्य	राजेस्थान पिपुल्स पब्लिशिंग हाऊस, १९८५
योगासन	स्वामी कुवल्यानंद	कैवल्या धाम लोनावला, १९९२
यौगिक प्राणायाम	डॉ. के.एस. जोशी	ओरियण्ट पेपर बॉक्स, दिल्ली, १९८६
योग दर्शन	विद्यालंकार सुनूता	क्लासिकल पब्लिक कंपनी, १९९५
योग दर्शन	हरि कृष्णदास गोयनका	गीता प्रेस, गोरखपुर, संवत, २०५५
विवेक चूड़ामणि	श्रीमान् शंकराचार्य विरचित	गीता प्रेस, गोरखपुर
Core Essentional of Anatomyt	Indra Bhargava	Sudha Printing Press, Ag., New Delhi.